'त्रावणकोर की महिलाओं द्वारा अपने वक्ष ढकने के अधिकार की 1859 की लड़ाई'

अगर उतरी भारत में खापें और जाट ना होते तो यहां 1857 नहीं अपितु त्रावणकोर का 1859 लड़ा जा रहा होता| और जो यह आज तथाकथित राष्ट्रवादी कम-कपड़े और फैशन के लिए पाश्चत्य सभ्यता को जिम्मेदार ठहराते हैं, इस किस्से को पढ़ के आपकी आँखें चुंधिया जाएँगी कि इनका यह ढकोसला सिर्फ इस घिनोने इतिहास से जनता का ध्यान बंटाए रखने हेतु है| इसलिए इससे पहले यह लोग हरियाणा और खापलैंड पे अपना प्रभाव और ज्यादा बढ़ावें और अपनी इस गली-सड़ी मानसिकता को कल को यहां फैलाने के मंसूबे आजमावें, हरियाणा के युवानो सावधान! अगर ऐसा होता है तो वाकई हमारे पुरखे जिन्होनें हमारे यहां ना कभी इनकी यह देवदासी प्रथा जड़ पकड़ने दी, ना कभी विधवाओं को आश्रमों में भेजने के इनके रिवाज स्वीकारे (जो यह लोग त्रावणकोर में करते थे फिर इसकी तो बात खापलैंड पे करनी इनके लिए सपनों भरी थी), वो हमें माफ़ नहीं करेंगे|

त्रावणकोर की महिलाओं द्वारा अपने वक्ष ढकने के अधिकार लेने का किस्सा इस प्रकार है: मंदिर में उन्हें ऊपरी वस्त्र खोलकर ही जाना होता था।स्तन ढकने का अधिकार पाने के लिए केरल में महिलाओं का ऐतिहासिक विद्रोह केरल के त्रावणकोर इलाके, खास तौर पर वहां की महिलाओं के लिए 26जुलाई का दिन बहुत महत्वपूर्ण है। इसी दिन 1859 में वहां के महाराजा ने अवर्ण (दलित और पिछड़ी) औरतों को शरीर के ऊपरी भाग पर कपड़े पहनने की इजाजत दी। अजीब लग सकता है, पर केरल जैसे प्रगतिशील माने जाने वाले राज्य में भी महिलाओं को अंग-वस्त्र या ब्लाउज पहनने का हक पाने के लिए 50 साल से ज्यादा सघन संघर्ष करना पड़ा। इस कुरूप परंपरा की चर्चा में खास तौर पर निचली जाति नादर की स्त्रियों का जिक्र होता है क्योंकि अपने वस्त्र पहनने के हक के लिए उन्होंने ही सबसे पहले विरोध जताया। नादर की ही एक उपजाति नादन पर ये बंदिशें उतनी नहीं थीं। उस समय न सिर्फ अवर्ण बल्कि नंबूदिरी ब्राहमण और क्षत्रिय नायर जैसी जातियों की औरतों पर भी शरीर का ऊपरी हिस्सा ढकने से रोकने के कई नियम थे। नंबूदिरी औरतों को घर के भीतर ऊपरी शरीर को खुला रखना पड़ता था। वे घर से बाहर निकलते समय ही अपना सीना ढक सकती थीं। लेकिन मंदिर में उन्हें ऊपरी वस्त्र खोलकर ही जाना होता था।

नायर औरतों को ब्राहमण पुरुषों के सामने अपना वक्ष खुला रखना होता था। सबसे बुरी स्थिति अनुसूचित जातिओ की औरतों की थी जिन्हें कहीं भी अंगवस्त्र पहनने की मनाही थी।

पहनने पर उन्हें सजा भी होती थी। एक घटना बताई जाती है जिसमें एक निम्न जाति की महिला अपना सीना ढक कर महल में आई तो रानी अत्तिंगल ने उसके स्तन कटवा देने का आदेश दे डाला। इस अपमानजनक रिवाज के खिलाफ 19 वीं सदी के शुरू में आवाजें उठनी शुरू हुईं। 18 वीं सदी के अंत और 19 वीं सदीके शुरू में केरल से कई मजदूर, खासकर नादन जाति के लोग, चाय बागानों में काम करने के लिए श्रीलंका चले गए। बेहतर आर्थिक स्थिति, धर्म बदल कर ईसाई बन जाने औऱ यूरोपीय असर की वजह से इनमें जागरूकता ज्यादा थी और ये औरतें अपने शरीर को पूरा ढकने लगी थीं। धर्म-परिवर्तन करके ईसाई बन जाने वाली नादर महिलाओंने भी इस प्रगतिशील कदम को अपनाया। इस तरह महिलाएं अक्सर इस सामाजिक प्रतिबंध को अनदेखा कर सम्मानजनक जीवन पाने की कशिश करती रहीं। यह कुलीन मर्दों को बर्दाश्त नहीं हुआ। ऐसी महिलाओं पर हिंसक हमले होने लगे। जो भी इस नियम की अहेलना करती उसे सरेबाजार अपने ऊपरी वस्त्र उतारने को मजबूर किया जाता। अवर्ण औरतों को छूना न पड़े इसके लिए सवर्ण पुरुष लंबे डंडे के सिरे पर छुरी बांध लेते और किसी महिला को ब्लाउज या कंचुकी पहना देखते तो उसे दूर से ही छुरी से फाड़ देते। यहां तक कि वे औरतों को इस हाल में रस्सी से बांध कर सरे आम पेड़ पर लटका देते

ताकि दूसरी औरतें ऐसा करते डरें। लेकिन उस समय अंग्रेजों का राजकाज में भी असर बढ़ रहा था। 1814 में त्रावणकोर के दीवान कर्नल मुनरो ने आदेश निकलवाया कि ईसाई नादन और नादर महिलाएं ब्लाउज पहन सकती हैं। लेकिन इसका कोई फायदा न हुआ। उच्च वर्ण के पुरुष इस आदेश के बावजूद लगातार महिलाओं को अपनी ताकत और असर के सहारे इस शर्मनाक अवस्था की ओर धकेलते रहे। आठ साल बाद फिर ऐसा ही आदेश निकाला गया। एक तरफ शर्मनाक स्थिति से उबरने की चेतना का जागना और दूसरी तरफ समर्थन में अंग्रेजी सरकार का आदेश। और ज्यादा महिलाओं ने शालीन कपड़े पहनने शुरू कर दिए। इधर उच्चवर्ण के पुरुषों का प्रतिरोध भी उतना ही तीखा हो गया। एक घटना बताई जाती है कि नादर ईसाई महिलाओं का एक दल निचली अदालत में ऐसे ही एक मामले में गवाही देने पहुंचा। उन्हें दीवान मुनरो की आंखों के सामने अदालत के दरवाजे पर अपने अंग वस्त्र उतार कर रख देने पड़े। तभी वे भीतर जा पाईं।

संघर्ष लगातार बढ़ रहा था और उसका हिंसक प्रतिरोध भी। सवर्णों के अलावा राजा खुद भी परंपरा निभाने के पक्ष में था। क्यों न होता। आदेश था कि महल से मंदिर तक राजा की सवारी निकले तो रास्ते पर दोनों ओर नीची जातियों की अर्धनग्न कुंवारी महिलाएं फूल बरसाती हुई खड़ी रहें। उस रास्ते के घरों के छज्जों पर भी राजा के स्वागत में औरतों को

ख़ड़ा रखा जाता था। राजाऔर उसके काफिले के सभी पुरुष इन दृष्यों का भरपूर आनंद लेते थे।

आखिर 1829 में इस मामले में एक महत्वपूर्ण मोड़ आया। कुलीन पुरुषों की लगातार नाराजगी के कारण राजा ने आदेश निकलवा दिया कि किसी भी अवर्ण जाति की औरत अपने शरीर का ऊपरी हिस्सा ढक नहीं सकती। अब तक ईसाई औरतों को जो थोड़ा समर्थन दीवान के आदेशों से मिल रहा था, वह भी खत्म हो गया। अब हिंदू-ईसाई सभी वंचित महिलाएं एक हो गईं और उनके विरोध की ताकत बढ़ गई। सभी जगह महिलाएं पूरे कपड़ों में बाहर निकलने लगीं। इस पूरे आंदोलन का सीधा संबंध भारत की आजादी की लड़ाई के इतिहास से भी है। विरोधियों ने ऊंची जातियों के लोगों की दुकानों और सामान को लूटना शुरू कर दिया। राज्य में शांति पूरी तरह भंग हो गई। दूसरी तरफ नारायण गुरु और अन्य सामाजिक, धार्मिक गुरुओं ने भी इस सामाजिक रूढ़ि का विरोध किया। मद्रास के कमिश्नर ने त्रावणकोर के राजा को खबर भिजवाई कि महिलाओं को कपड़े न पहनने देने और राज्य में हिंसा और अशांति को न रोक पाने के कारण उसकी बदनामी हो रही है। अंग्रेजों के और नादर आदि अवर्ण जातियों के दबाव में आखिर त्रावणकोर के राजा को घोषणा करनी पड़ी कि सभी महिलाएं शरीर का ऊपरी हिस्सा वस्त्र से ढंक सकती हैं। 26 जुलाई 1859 को राजा के एक आदेश के जरिए महिलाओं के ऊपरी वस्त्र न पहनने के कानून को बदल दिया गया। कई स्तरों पर विरोध के बावजूद आखिर त्रावणकोर की महिलाओं ने अपने वक्ष ढकने जैसा बुनियादी हक छीन कर लिया।

तस्वीरों में: नादर, नायर और नंबुदरी जाती की औरतें और दरबार!

अपील: इसलिए मित्रों धर्म की धर्मान्धता कितनी घातक, कुलनाशिनी और मर्यादाहरणी होती है, उसका इससे बड़ा उदाहरण और कोई नहीं हो सकता| इसलिए इस धर्म की धर्मान्धता से बचें, क्योंकि इसकी पीक (peak) यानी कुंठा की सीमा ऐसी ही घिनौनी है जैसी आपने इस उदाहरण में पढ़ी|

हरियाणा यौद्धेय उद्घोषम, मोर पताका: सुशोभम्!

Author: Phool Malik

Publisher: Nidana Heights

Dated: 02/02/2015